दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

रि.या. (सि.) सं. 1763/1979

निर्णय तिथि: 30 जुलाई, 2008

बी. पी. सिन्हा ...याचिकाकर्ता

के द्वारा: श्री जी. डी. गुप्ता, वरिष्ठ अधिवक्ता सह श्री एस. आर. कल्कल,अधिवक्ता

बनाम

भारत संघ व अन्य ...प्रत्यर्थीगण

के द्वारा: श्री ए. के. भारद्वाज, अधिवक्ता।

कोरम:
माननीय न्यायमूर्ति श्री संजय किशन कौल
माननीय न्यायमूर्ति श्री मूल चंद गर्ग

1. क्या स्थानीय समाचार पत्र के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है?

2. रिपोर्टर को संदर्भित किया जाना है या नहीं? हाँ

3. क्या निर्णय डाइजेस्ट में प्रकाशित किया जाना चाहिए? हाँ

न्या. संजय किशन कौल (मौखिक)

1. याचिकाकर्ता को दिनांक 28 जुलाई, 1963 को सीआरपीएफ में कांस्टेबल के रूप में नियुक्त किया गया था। कथित है कि याचिकाकर्ता ने अपनी सेवा की अवधि के दौरान पूर्वोत्तर राज्यों नागालैंड और मणिपुर में लगभग 14 साल बिताए थे। याचिकाकर्ता के लिए परेशानी तब शुरू हुई जब उन्हें दिनांक 12 दिसंबर, 1978 को सीआरपीएफ अधिनियम, 1949 (इसके पश्चात उक्त नियम के रूप में संदर्भित) की धारा 11(1) के तहत अनुशासनात्मक कार्रवाई लंबित रहने तक सी.सी.एस. (सी.सी.ए.) नियम, 1965 (इसके पश्चात "उक्त सी.सी.एस. नियम" के रूप में संदर्भित) के नियम 10(1) के तहत निलंबित कर दिया गया था । अनुशासनात्मक कार्यवाही का समापन दिनांक 21 मार्च, 1979 को याचिकाकर्ता की सेवा को बर्खास्त करने के आदेश के साथ हुआ। याचिकाकर्ता द्वारा सक्षम अधिकारियों के समक्ष दायर अपील को दिनांक 30 मई, 1979 को खारिज कर दिया गया था। इसके पश्चात याचिकाकर्ता ने वर्तमान याचिका दायर की। याचिकाकर्ता का मामला दुर्भाग्य से लंबे समय से निपटान के लिए लंबित है। इस पर अब केवल अंतिम निपटान हेतु सुनवाई की जाएगी।

2. याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप यह है कि उसने तेजू में सीआरपीएफ की एक पलटन में जाने के लिए दिनांक 9 दिसंबर, 1978 के आधिकारिक निर्देश को प्रतिग्रहण करने से इनकार कर दिया था और इस प्रकार उक्त प्रक्रिया में अवज्ञा का कार्य किया गया ।

3. अनुशासनात्मक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पुष्टि किए गए जांच अधिकारी द्वारा तथ्य निष्कर्ष के विवरण में जाना आवश्यक नहीं है क्योंकि यह न्यायालय अभिलेख पर सामग्री की पुनः सराहना करने के लिए अपील न्यायालय के रूप में नहीं बैठती है। यह कहना पर्याप्त है कि याचिकाकर्ता को जांच अधिकारी के बारे में भी कुछ शिकायत है क्योंकि उसने पक्षपात का आरोप लगाया है। इसका कारण याचिकाकर्ता द्वारा तीसरे वेतन आयोग के तहत लाभ के लिए कुछ अन्य कर्मियों के साथ शुरू की गई कुछ पिछली मुकदमेबाजी बताई गई है।

4. हमने याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता को यह बताया है कि उनकी प्रस्तुतियाँ जांच रिपोर्ट के ऐसे निष्कर्षों की न्यायिक जांच के मापदंडों तक ही सीमित होनी चाहिए और इस प्रकार विद्वान अधिवक्ता ने कार्यवाहियों में प्रक्रियात्मक दुर्बलताएँ को इंगित करने के लिए केवल दो पहलुओं पर ध्यान केंद्रित किया जिनके लिए कार्यवाहियों को शून्य करने की आवश्यकता होगी।

5. पहली शिकायत यह है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक पूछताछ की कार्यवाही शुरू करने से पहले प्रारंभिक पूछताछ की गई थी। गवाहों के बयान प्रारंभिक पूछताछ में दर्ज किए गए थे और वे बयान याचिकाकर्ता के बार-बार अनुरोध करने के बावजूद उपलब्ध नहीं कराए गए थे। याचिकाकर्ता इस प्रकार दावा करता है कि वह विभाग के गवाहों से प्रति-परीक्षा करने में अक्षम था और यही कारण है कि उसने वास्तव में गवाहों से प्रति-परीक्षा नहीं की।

हालांकि, यह विवाद में नहीं है कि याचिकाकर्ता के अनुरोध पर प्रारंभिक जांच से पूर्व ऐसे बयानों का निरीक्षण किया गया था। तथ्यात्मक मैट्रिक्स से पता चलता है कि विभागीय जांच में विभाग के गवाहों से दिनांक 3 और 4 जनवरी, 1979 को पूछताछ की गई थी। प्रारंभिक जांच में दर्ज बयानों का निरीक्षण दिनांक 5 जनवरी, 1979 को याचिकाकर्ता को दिया गया था और गवाहों को दिनांक 6 जनवरी, 1979 को प्रति-परीक्षा के लिए फिर से बुलाया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता गवाह से प्रति-परीक्षा करने में विफल रहा।

6. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने *पंजाब राज्य बनाम भगत राम [(1975) 1 एस.सी.सी. 155]* के मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का संदर्भ देते हुए प्रतिवाद किया है कि प्रारंभिक पूछताछ में इस तरह के बयानों की आपूर्ति एक अनिवार्य आवश्यकता थी और इस प्रकार गैर-आपूर्ति अनुशासनात्मक कार्यवाही को निष्प्रभाव कर देगी। इस आधार पर विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने उक्त मामले के तथ्यों को संदर्भित किया है जहाँ विभागीय जांच में गवाहों की जांच के दौरान पुलिस द्वारा दर्ज किए गए बयान राज्य द्वारा प्रदान नहीं किए गए थे, बल्कि केवल सारांश दिए गए थे। इसे एक समुचित अवसर नहीं माना गया था। इसे पैरा 7 में निम्नानुसार पाया गया था:

> "7. प्रस्तावित कार्रवाई के विरुद्ध कारण बताने के लिए समुचित अवसर का अर्थ यह है कि सरकारी कर्मचारी को उन आरोपों के विरुद्ध अपनी रक्षा करने का समुचित अवसर दिया जाता है जिन पर जांच की जाती है। सरकारी कर्मचारी

> को अपने अपराध से इनकार करने और अपनी बेगुनाही स्थापित करने का अवसर दिया जाना चाहिए। वह ऐसा तब कर सकता है जब उसे बताया जाए कि उसके खिलाफ क्या आरोप हैं। वह अपने विरुद्ध पेश किए गए गवाह से प्रति-परीक्षा करके ऐसा कर सकता है। बयान देने का उद्देश्य यह है कि सरकारी कर्मचारी, सरकारी कर्मचारी के खिलाफ पूछताछ के लिए प्रस्तावित गवाहों के पिछले बयानों का उल्लेख करने में समर्थ होगा। जब तक सरकारी कर्मचारी को बयान नहीं दिया जाता, तब तक वह एक प्रभावी और उपयोगी प्रति परीक्षा नहीं कर पाएगा।"

7. दूसरी ओर प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद है कि प्रारंभिक पूछताछ केवल यह अभिनिश्चित करने के उद्देश्य से की गई थी कि क्या विभागीय जांच की जानी चाहिए और विभागीय कार्यवाही के दौरान बयानों सहित प्रारंभिक जांच का हिस्सा नहीं था। इस प्रकार यह प्रतिवाद किया गया है कि जब तक कि उक्त बयानों पर भरोसा नहीं किया जाता है, तब तक उनका विभागीय जांच पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। चूंकि याचिकाकर्ता बयानों पर जोर दे रहा था, इसलिए निरीक्षण किया गया और यहाँ तक कि विभागीय कार्यवाही में दर्ज किए गए बयानों की प्रतियाँ भी बाद में उपलब्ध कराई गईं, यद्यपि विभागीय जांच में याचिकाकर्ता की उपस्थिति में गवाहों की जांच की गई थी।

8. हमारी सुविचारित राय में, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद पर जोर दिया है। *पंजाब राज्य बनाम भगत राम मामले (पूर्वोक्त)* में दिया गया

निर्णय केवल तभी लागू होगा जब विभागीय कार्यवाही से पूर्व के दस्तावेजों या प्रारंभिक पूछताछ के बयानों को भी विभागीय कार्यवाही के दौरान अभियुक्त व्यक्ति के खिलाफ सामग्री के रूप में आधार बनाया जाए। जब सभी गवाहों को नए सिरे से बुलाया जाए, उनके बयान दर्ज किए जाए और प्रति-परीक्षा के लिए उन्हें अवसर दिया जाए, तो प्रारंभिक पूछताछ के उन बयानों की आपूर्ति की वास्तव में कोई आवश्यकता नहीं होगी जिन पर भरोसा नहीं किया गया है। प्रत्यर्थीगण ने प्रारंभिक जांच में दर्ज इन परिसाक्ष्यों का निरीक्षण भी याचिकाकर्ता को दे दिया है और इस प्रकार किसी भी मामले में याचिकाकर्ता इसके संबंध में शिकायत नहीं कर सकता है।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा दायर की गई दूसरी याचिका यह है कि याचिकाकर्ता को कोई रक्षा सहायक उपलब्ध नहीं कराया गया था जो याचिकाकर्ता के रक्षा से समझौता करा पाता। याचिकाकर्ता ने उसके पास कोई उच्च शैक्षिक योग्यता नहीं होने का दावा किया है और इसलिए वह व्यक्तिगत रूप से अपनी रक्षा नहीं कर पाया। इस आधार पर रिट याचिका के पैरा 14 में एक विशिष्ट प्रकथन किया गया है। प्रति शपथ-पत्र में कहा गया है कि विभागीय जांच में कानूनी अधिवक्ता के लिए प्रत्यर्थीगण के नियमों को प्रदान नहीं किया जाता हैं।

10. हमें प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थीगण इस भ्रम में है कि याचिकाकर्ता कानूनी अधिवक्ता की माँग कर रहा था। अभिलेख से पता चलता है कि

याचिकाकर्ता केवल एक सहायक की मांग कर रहा था, जो दिल्ली दुग्ध योजना में लिपिक था। चाहे वो जो भी हो, प्रत्यर्थीगण को अभियुक्त के किसी मित्र को उपस्थित करना चाहिए था भले ही वह प्रत्यर्थीगण के व्यक्तिगत सेवा के लिए हो । इसे इस परिणाम के साथ नहीं किया गया था कि याचिकाकर्ता विभाग के गवाहों से पूछताछ नहीं कर सका और न ही कर पाया था ।

11. प्रत्यर्थीगण के लिए विद्वान अधिवक्ता, हालांकि, प्रस्तुत करते हैं कि सीआरपीएफ नियम, 1955 का नियम 27 (इसके पश्चात "सीआरपीएफ नियम" के रूप में संदर्भित किया गया) के आधार पर में एक पूर्ण प्रक्रिया प्रदान की जाती है। उप नियम (ग) निम्नानुसार है:

> (ग) विभागीय जांच करने की प्रक्रिया निम्नानुसार होगी:
>
> (1) आरोप का सार लिखित आरोप के रूप में प्रस्तुत किया जाएगा, जो यथासंभव सटीक होना चाहिए। आरोप को अभियुक्त को पढ़कर सुनाया जाएगा और जांच शुरू होने से कम से कम 48 घंटे पहले उसे इसकी एक प्रति दी जाएगी।
>
> (2) जांच के प्रारंभ में अभियुक्त को "दोषी" या "निर्दोष" होने का अभिवाक दर्ज करने के लिए कहा जाएगा, जिसके बाद आरोप को स्थापित करने के लिए आवश्यक साक्ष्य पेश किए जाएंगे। साक्ष्य आरोप के लिए महत्वपूर्ण होंगे और मौखिक या दस्तावेजी हो सकते हैं, यदि मौखिक हो;
>
> (i) यह प्रत्यक्ष होगा।
>
> (ii) इसे जांच अधिकारी द्वारा अभियुक्त की उपस्थिति में स्वयं दर्ज किया जाएगा;

(iii) अभियुक्त को गवाहों से प्रति-परीक्षा करने की अनुमति दी जाएगी।

(3) जब आरोप के समर्थन में दस्तावेजों पर भरोसा किया जाता है, तो उन्हें प्रदर्श के रूप में प्रस्तुत किया जाएगा और अभियुक्त को अपनी रक्षा प्रस्तुत करने के लिए बुलाए जाने से पहले ऐसे प्रदर्शों का निरीक्षण करने की अनुमति दी जाएगी।

(4) इसके बाद अभियुक्त का परीक्षण और जांच करने वाले अधिकारी द्वारा उसका बयान दर्ज किया जाएगा। यदि अभियुक्त ने दोषी होने का अभिवचन दिया है और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को चुनौती नहीं देता है, तो कार्यवाही आदेशों के अनुसार बंद कर दी जाएगी। यदि वह "निर्दोष" होने का अभिवचन करता है, तो उसे एक लिखित बयान दाखिल करने और ऐसे गवाहों की सूची दाखिल करने की आवश्यकता होगी, जिन्हें वह अपने रक्षा में उद्धृत करना चाहे, ऐसी अवधि के भीतर, जो किसी भी मामले में एक पखवाड़े से कम नहीं होगी, जिसे जांच करने वाला अधिकारी मामले की परिस्थितियों में उचित समझे। यदि वह लिखित बयान दाखिल करने से इनकार करता है तो जांच अधिकारी द्वारा निर्धारित अवधि की समाप्ति पर पुनः उससे पूछताछ की जाएगी।

(5) यदि अभियुक्त अपनी रक्षा में कोई गवाह पेश करने या कोई साक्ष्य पेश करने से इनकार करता है, तो कार्यवाही आदेश के अनुसार बंद कर दी जाएगी। यदि वह कोई साक्ष्य प्रस्तुत करता है तो जांच करने वाला अधिकारी साक्ष्य दर्ज करने के लिए आगे बढ़ेगा। यदि जांच करने वाला अधिकारी यह मानता है कि किसी गवाह का साक्ष्य या कोई दस्तावेज जिसे अभियुक्त अपने रक्षा में पेश करना चाहता है, मामले में शामिल मुद्दों के लिए महत्वपूर्ण नहीं है, तो वह ऐसे गवाह

को बुलाने या ऐसे दस्तावेज को साक्ष्य के तौर पर पेश करने की अनुमति देने से इनकार कर सकता है, लेकिन ऐसे सभी मामलों में उसे साक्ष्य को अस्वीकार्य मानने के अपने कारणों को संक्षेप में दर्ज करना होगा। जब सभी प्रासंगिक साक्ष्य अभिलेख पर लाए गए हैं, तो कार्यवाही आदेश के अनुसार बंद कर दी जाएगी।

(6) यदि कमांडेंट ने स्वयं जांच की है, तो वह अपने निष्कर्षों को दर्ज करेगा और जहां उसे ऐसा करने की शक्ति प्राप्त है, वहां आदेश पारित करेगा। यदि जांच कमांडेंट के अलावा किसी अन्य अधिकारी द्वारा जांच की गई है, तो जांच अधिकारी कार्यवाही के साथ अपना अभिलेख कमांडेंट को भेजेगा, जो अपने निष्कर्षों को दर्ज करेगा और जहां उसे ऐसा करने की शक्ति है, वहां आदेश पारित करेगा।"

12. विद्वान अधिवक्ता इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि सीआरपीएफ नियमों में रक्षा सहायक प्रदान करने के लिए में कोई प्रावधान नहीं है। विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि जैसा कि इस न्यायालय ने पहले पहलू पर ऊपर टिप्पणी की है कि रक्षा सहायक के लिए किसी भी प्रावधान की अनुपस्थिति में में उसी पैरामीटर पर सीआरपीएफ नियमों के नियम 27 के खंड ग के उप खंड 3 में प्रदान किए गए दस्तावेजों की कोई प्रतियाँ प्रदान करने की आवश्यकता नहीं थी, याचिकाकर्ता को इस आधार पर शिकायत करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करते हैं कि यह सबसे अच्छा एक तकनीकी दोष है जिसे जांच कार्यवाही को शून्य नहीं किया जा सकता है।

13. इस आधार पर विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश (जैसा कि वे उस समय थे) के एक निर्णय का सिविल रिट याचिका सं. 3920/1999 में संदर्भित किया है जिसका शीर्षक *राम बिहारी शुक्ला बनाम भारत संघ और अन्य* है के मामले में दिनांक 6 दिसंबर 2001 को निर्णय लिया गया। उक्त निर्णय के पैरा 8 में यह कहा गया है कि अधिवक्ता की सहायता न उपलब्ध कराना सीआरपीएफ नियमों के तहत नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं था ।

14. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने सीआरपीएफ नियमों के नियम 102 की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है जो निम्नानुसार है:

> "**102. सेवा की अन्य शर्तें** - उन विषयों के संबंध में बल के सदस्यों की सेवा की शर्तें, जिनके लिए इन नियमों में कोई प्रावधान नहीं किया गया है, वही होंगी जो तत्समय भारत सरकार के समतुल्य स्थिति के अन्य अधिकारियों पर लागू हैं।"

15. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का कहना है कि सीआरपीएफ नियमावली के नियम 27 का खंड ग रक्षा सहायक उपलब्ध कराने पर रोक नहीं लगाता है, भले ही इसमें ऐसे रक्षा सहायकों के लिए विशेष प्रावधान न किया गया हो। इस प्रकार यह प्रस्तुत किया गया है कि इसको ध्यान में रखते हुए सीआरपीएफ नियम का नियम 102 लागू होगा और उक्त नियम रक्षा सहायक के प्रावधान के लिए वर्तमान मामले में समान रूप से लागू होगा। हमें ध्यान

देना चाहिए कि सी.सी.एस. नियमों को विशेष रूप से एक रक्षा सहायक के लिए उपलब्ध किया जाता हैं जो कि विवाद में भी नहीं है। ऐसे व्यक्ति को अधिवक्ता होने की आवश्यकता नहीं है। इस बात पर भी ध्यान दिया जा सकता है कि निलंबन का आदेश पारित करने के दौरान भी, उक्त अधिनियम के साथ पढ़े गए सी.सी.एस. नियमों के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए ऐसा किया गया है। हम इस पर भी ध्यान दे सकते हैं कि सीआरपीएफ नियमों के नियम 110 के तहत वरिष्ठ अधिकारी सी.सी.एस. (नियंत्रण और अपील से वर्गीकरण) नियम, 1957 के अधीन हैं।

16. उक्त अधिनियम और सीआरपीएफ नियमों की योजना इस प्रकार दर्शाती है कि सेवा कर्मियों से संबंधित कुछ मामलों के लिए सीआरपीएफ नियमों के तहत विशिष्ट प्रावधान किया गया है। जहाँ भी ऐसा विशिष्ट प्रावधान नहीं किया जाता है वहाँ सी.सी.एस. नियम लागू होते हैं। सीआरपीएफ नियमों के नियम 27 खंड ग अनुशासनात्मक कार्यवाही और उक्त कार्यवाही के लिए आचरण के तरीके को संदर्भित करता है। यह विशेष रूप से रक्षा सहायक प्रदान करने पर प्रतिबंध नहीं लगाता है, यद्यपि यह विशेष रूप से ऐसे रक्षा सहायक के लिए प्रावधान नहीं करता है। यह संभव है कि एक प्रभारित कर्मी रक्षा सहायक की मांग भी न करे। ऐसे मामले में, इसके लिए कोई विशिष्ट नियम न होने के कारण, प्रत्यर्थीगण की कोई गलती नहीं हो सकती। लेकिन जहां किसी व्यक्ति ने विशेष रूप से ऐसे रक्षा सहायक की मांग की है, सीआरपीएफ नियमों

की खंड 102 के साथ पढ़े गए नियम 27 (ग) के पढ़ने से हमें पता चलता है कि इस आधार पर सी.सी.एस. नियम लागू होते हैं और प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्ता को एक रक्षा सहायक उपलब्ध कराना चाहिए था।

17. हम प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता की इस दलील को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि ऐसे सहायक को उपलब्ध न कराना महज एक तकनीकी दोष है जिसे राहत की प्रकृति पर विचार करते समय नजरअंदाज किया जाना चाहिए। ऐसे सहायक की अनुपस्थिति मामले की जड़ तक जाती है और बचाव पक्ष को नुकसान पहुंचाती है।

18. हम इस बात पर संतोष व्यक्त करते हैं कि प्रत्यर्थीगण ने स्वयं दिनांक 16 सितंबर, 2005 को एक परिपत्र सं. 06/05 जारी करके इस संबंध में स्थिति को सुधार लिया है, जिसमें आरोपित अधिकारी द्वारा अनुरोध किए जाने पर एक रक्षा सहायक की व्यवस्था की गयी है, हालांकि इसका भावी प्रभाव है। उक्त परिपत्र यहाँ नीचे उद्धरित किया गया है:

"परिपत्र आदेश सं.06/05

> हाल ही में यह देखा गया है कि विभिन्न न्यायालयों ने विभागीय कार्यवाही में रक्षा सहायक प्रदान करने में विफलता के आधार पर अपराधियों के खिलाफ अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा पारित पदच्युत/हटाने के आदेशों को रद्द कर दिया है।
>
> 2. गैर राजपत्रित रैंक के लिए विभागीय जांच करने की प्रक्रिया सीआरपीएफ नियम, 1955 के नियम 27 में निर्धारित की गई

है। उक्त नियमों में अपचारी कर्मचारियों द्वारा उनके खिलाफ शुरू की गई विभागीय कार्यवाही में रक्षा सहायक की नियुक्ति का कोई प्रावधान नहीं है। ऐसे मामलों में जहाँ याचीगण ने जांच में विभाग द्वारा रक्षा सहायक प्रदान नहीं करने का मुद्दा उठाया है, विभाग ने इस संबंध में विशिष्ट प्रावधान की अनुपस्थिति का हवाला देते हुए अपने हित की रक्षा करने का प्रयास किया है। हालांकि, कई मामलों में न्यायालयों ने विभाग की इस याचिका को स्वीकार नहीं किया है और इसके बजाय पाया है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रकृति में न्यायिककल्प होने के कारण नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को आकर्षित करती है क्योंकि कार्यवाही में आदेश में नागरिक परिणाम शामिल होते हैं। श्रृंखलागत निर्णयों में शीर्ष न्यायालय द्वारा में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि पदच्युत के आदेश द्वारा आजीविका से वंचित होना न्यायसंगत, निष्पक्ष और उचित होना चाहिए। इस प्रकार नैसर्गिक न्याय की आवश्यकताओं से किसी को भी वंचित नहीं किया जा सकता है।

3. एक ओर विभाग के पास बड़ी संख्या में लंबित जांचों में रक्षा सहायक के रूप में कार्य करने के लिए बड़ी संख्या में कार्मिकों की आवश्यकता के कारण प्रशासनिक प्राधिकरण के सामने आने वाली संभावित अंतर्निहित समस्याओं को ध्यान में रखना, तथा दूसरी ओर न्यायालयों के अवलोकन के अनुसार नैसर्गिक न्याय की आवश्यकताओं को पूरा करने को ध्यान में रखा जाता है, इस प्रकार, यह सलाह दी जाती है कि सीआरपीएफ में गैर सरकारी संगठनों के विरुद्ध सभी विभागीय कार्यवाही में, अपचारी व्यक्ति का प्रतिनिधित्व/सहायक उस पद के भीतर के व्यक्ति द्वारा की जा सकती है जिसकी सेवाएं अपचारी प्राप्त करने में समर्थ हो सकता है और जिसे "रक्षा सहायक" के रूप में बुलाया जाएगा।

4. इस तरह का प्रावधान सेना नियम, 1954 के नियम 95, बी.एस.एफ. नियम 1969 के नियम 122, एन.एस.जी. नियम 1987 के नियम 118 और आई.टी.बी.पी. नियम 1994 के नियम 123 में उपलब्ध "रक्षा अधिकारी और अभियुक्त का मित्र" शीर्षक वाले प्रावधान की तर्ज पर होगा। रक्षा सहायक के पास वही अधिकार और कर्तव्य होंगे जो नियमों के तहत एक अधिवक्ता के लिए लागू होते हैं और समान दायित्वों के तहत होंगे। “रक्षा सहायक "सभी बिंदुओं पर अपराधी को सलाह दे सकता है और गवाहों को दिए जाने वाले प्रश्नों का सुझाव दे सकता है, लेकिन वह अभियोजन पक्ष के गवाह से पूछताछ/प्रति-परीक्षा नहीं करेगा या जांच अधिकारी को संबोधित नहीं करेगा। यह प्रावधान केवल उन प्रभारित अधिकारियों के संबंध में लागू किया जाना चाहिए जो रक्षा सहायक के लिए विशिष्ट माँग करते हैं। ऐसे मामलों में जहाँ अपराधी उपरोक्त उल्लिखित रक्षा सहायकों के प्रावधान का लाभ नहीं उठाना चाहते हैं, जांच अधिकारियों को इस आशय को आदेश पत्र में विधिवत उल्लेख/रिकॉर्ड करना चाहिए।

5. इसे सभी संबंधित लोगों के ध्यान में लाया जा सकता है।

(जे.के. सिन्हा)
महानिदेशक”

(जोर दिया गया)

19. उक्त परिपत्र ने वास्तव में ऐसे रक्षा सहायकों को स्वीकार नहीं करने के लिए सीआरपीएफ नियमों के नियम 27 के आधार पर याचिका की न्यायालयों

द्वारा अस्वीकृति के रूप में इसे जारी करने के कारणों का हवाला दिया है क्योंकि अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रकृति में न्यायिककल्प होने के कारण नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को आकर्षित करती है क्योंकि कार्यवाही के आदेश में नागरिक परिणाम शामिल होते हैं। शीर्ष न्यायालय ने कई निर्णयों में यह भी कहा है कि पदच्युत के आदेश से आजीविका से वंचित होना न्यायसंगत, निष्पक्ष और उचित होना चाहिए और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों से इनकार नहीं किया जा सकता है। एक बार जब इस सिद्धांत को प्रत्यर्थी द्वारा स्वयं परिपत्र में सौभाग्य से शामिल कर लिया जाता है, तो लंबित मुकदमेबाजी में इसका विस्तार नहीं करने का शायद ही कोई कारण हो सकता है जो अभी तक अंतिम रूप से प्राप्त नहीं हुआ है।

20. उपर्युक्त का परिणाम यह है कि इस संक्षिप्त आधार पर याचिकाकर्ता के विरुद्ध सेवा पदच्युत के आदेश को रद्द किया जाता है।

21. इस प्रकार यह प्रश्न उठता है कि याचिकाकर्ता को किस प्रकार की राहत प्रदान की जानी चाहिए । पदच्युत का आदेश याचिकाकर्ता को सभी परिणामी लाभों के साथ सेवा में बहाल करने के लिए होता, जिससे प्रत्यर्थीगण को नए सिरे से अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का अवसर मिलता। कार्रवाई का यह तरीका संभव नहीं है क्योंकि याचिकाकर्ता अब तक सेवा से सेवानिवृत्त हो चुका होगा। लंबे समय के अंतराल के कारण यह मामला लंबित है, क्योंकि याचिकाकर्ता की आयु लगभग 66 वर्ष है।

22. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने निष्पक्ष रूप से स्वीकार किया कि विभागीय कार्यवाही में उपरोक्त दोष के परिणामस्वरूप एक उचित परिणाम सुनिश्चित होना चाहिए और इस प्रकार अनुशासनात्मक कार्यवाही को रद्द करने के परिणामस्वरूप पिछले वेतन, वरिष्ठता लाभों आदि का दावा किए बिना पेंशन लाभों तक उसकी राहत सीमित है। इस आधार पर याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने *देश राज शानवाल (लेफ्टिनेंट कर्नल) बनाम भारत संघ और अन्य [2004 (1) एससीआर 191]* के मामले में इस न्यायालय के एक खण्ड पीठ के निर्णय की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। जिसमें याचिकाकर्ता को बकाया वेतन के बिना सेवानिवृत्ति लाभों का हकदार माना गया था, जहां याचिकाकर्ता 23 वर्षों तक विवाद के निर्णय की लंबी प्रक्रिया के दौरान सेवानिवृत्ति की आयु तक पहुंच गया था। एक अन्य मामले में *पूर्व सिपाही सुबे सिंह बनाम भारत संघ और अन्य* [140 (2007) 26] के मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने राहत देते हुए अभिनिर्धारित किया था कि जहाँ किसी व्यक्ति को एक आक्षेपित आदेश के अनुसार छुट्टी नहीं दी जानी चाहिए थी, याचिकाकर्ता को सेवा से बहाल करने या उसे कोई अन्य पेंशन लाभ प्रदान किए बिना सेवा पेंशन मिल सकती है। याचिकाकर्ता को केवल सेवा पेंशन और पेंशन योग्य सेवा की न्यूनतम अवधि पूरी होने पर मिलने वाले अन्य लाभों का हकदार माना गया था ।

23. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि याचिकाकर्ता ने 15 साल से थोड़े कम समय तक सेवा की है जबकि पेंशन योग्य सेवा 20 वर्षों की है। विद्वान अधिवक्ता इस प्रकार प्रस्तुत करते है कि जब तक याचिकाकर्ता ने वास्तव में 20 वर्षों की अहर्ता सेवा पूरी नहीं की होगी, तब तक याचिकाकर्ता को उक्त लाभ नहीं दिया जाना चाहिए।

24. वर्तमान मामले के तथ्य के संदर्भ में हमारा विचार है कि न्यायाधीश के उद्देश्यों को निम्नानुसार पूरा किया जाएगा जैसा कि *पूर्व सिपाही सुबे सिंह (पूर्वोक्त)* के मामले में किया गया है। ऐसा इसलिए है क्योंकि जो स्थिति उत्पन्न हुई है उसके लिए उत्तरदाता ही जिम्मेदार हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह प्रत्यर्थीगण ही है जो उत्पन्न हुई स्थिति के लिए जिम्मेदार है। याचिकाकर्ता सेवा में बना रहता और पेंशन अर्जित करने के लिए अहर्ता पेंशन योग्य अवधि पूरी करता। पदच्युत के आदेश से सेवा में कटौती की गई थी जिसे अपास्त कर दिया गया है। हमें कोई कारण नहीं दिखता है कि याचिकाकर्ता को सीआरपीएफ में 20 साल की सेवा पूरी करने पर सेवा पेंशन और अन्य लाभों का हकदार क्यों नहीं ठहराया जाना चाहिए। यह निर्देश देकर प्राप्त किया जा सकता है कि याचिकाकर्ता की पदच्युत आक्षेपित आदेश के अनुसार उल्लिखित तिथि से प्रभावी होने के बावजूद, याचिकाकर्ता को सेवा की विस्तारित अवधि के बिना या वेतन के किसी भी बकाया के हकदार के बिना पेंशन योग्य सेवा के

20 साल पूरे होने पर सेवानिवृत्त माना जाएगा। यह *पूर्व सिपाही सुबे सिंह (पूर्वोक्त) के मामले* में अपनाई गई कार्रवाई का ठीक तरीका है।

25. प्रत्यर्थीगण को निर्देश परमादेश किया जाता है कि वे याचिकाकर्ता को 20 साल की सेवा पूरी होने तक सेवा में माने और याचिकाकर्ता को सीआरपीएफ में 20 वर्षों की सेवा पूरी होने पर बिना किसी बकाया वेतन या वरिष्ठता के सेवा पेंशन और अन्य लाभ प्रदान करें और याचिकाकर्ता को उसके निर्वहन की तारीख से पेंशन योग्य सेवा पूरी करने लेने वाला माना जाएगा, जो कि 20 वर्षों की सेवा पूरी होने की तिथि होगी। याचिकाकर्ता को देय राशि आज से तीन महीने के भीतर याचिकाकर्ता को भेज दी जाए।

26. याचिका को उपरोक्त शर्तों के साथ स्वीकार किया जाता है तथा पक्षकारगण को अपना खर्च स्वयं वहन करने की छूट दी जाती है।

न्या. संजय किशन कौल

30 जुलाई, 2008 न्या. मूल चंद गर्ग
डीसी

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*